'अप्प दीपो भव'

वॉयस ऑफ बुद्धा

Postal Reg. No.-DL(ND)-11/6144/2019-20-21
WPP Licence No.- U(C)-101/2019-2021
R.N.I. No. 68180/98

Date of Publication : 16.03.2019
Date of Posting on concessional rate :
2-3 & 16-17 of each fortnight

मूल्य : पाँच रूपये

प्रकाशक : डॉ. उदित राज, चेयरमैन - जस्टिस पब्लिकेशंस, टी-22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001, फोन : 011-23354841-42

Website : www.aiparisangh.com E-mail: parisangh1997@gmail.com

● वर्ष : 22 ● अंक 6 ● पाक्षिक ● द्विभाषी ● कुल पृष्ठ संख्या 8 ● 1 से 15 मार्च, 2019

करे न्यायपालिका - भरे सरकार

20 मार्च, 2018 को सुप्रीम कोर्ट ने अनुसूचित जाति/जन जाति अत्याचार निवारण अधिनियम में इतना परिवर्तन कर दिया किया कि अधिनियम बेदम हो गया। ज्ञात रहे कि यह अधिनियम एक विशेष श्रेणी का है, जो संसद ने बनाया और इसमें परिवर्तन केवल संसद ही कर सकती है, न कि न्यायपालिका। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के शिक्षक ने इलाहाबाद हाई कोर्ट में दलित, आदिवासी एवं पिछड़ों की विश्वविद्यालय में भर्ती के संबंध में मुकदमा दायर किया, जिस पर न्यायपालिका ने एक नई नीति निर्धारित कर दी, जबकि उसके पास यह शक्ति प्रदान नहीं थी। दुर्भाग्य है कि सुप्रीम कोर्ट ने भी इलाहाबाद हाई कोर्ट के फैसले पर मुहर लगा दी और परिणामस्वरूप 5 मार्च, 2018 को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने एक प्रपत्र जारी किया कि विश्वविद्यालयों में शिक्षकों की भर्ती विभाग स्तर पर होगी न कि विश्वविद्यालय। ये दोनो निर्णय असंवैधानिक, जातिवादी और भेदभावपूर्ण थे। जिसकी वजह से पूरे देश के दलितों और आदिवासियों में भारी आक्रोश पैदा हुआ और 2 अप्रैल, 2018 को भारत बंद का आवाहन हुआ। इस बंद से एक जातीय संघर्ष जैसी स्थिति पैदा हुई और इसका ठीकरा सरकार पर फूटा।

विवेकानंद तिवारी के मामले में इलाहाबाद हाई कोर्ट ने कहा कि विश्विद्यालय को इकाई न मानकर विभाग को शिक्षक भर्ती के लिए इकाई माना जाना चाहिए। हुआ यह था कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय ने

शिक्षक भर्ती के लिए एक विज्ञापन जारी किया था जिसको विवेकानंद तिवारी ने इलाहाबाद हाई कोर्ट में चुनौती दी। जज विक्रमनाथ ने फैसला दिया कि आरक्षण लागू करने के लिए विभाग को इकाई माना जाए क्योंकि यह प्रावधान संविधान में सक्षम क्लाज के तहत है। न्यायाधीश महोदय भूल जाते हैं कि संविधान की धारा 335 में यह स्पष्ट है कि अनुसूचित जाति एवं जन जाति का कोटा पूरा करना अनिवार्य है। इस निर्णय से सरकार की नीति में बदलाव आया जो हाई कोर्ट नहीं कर सकता। विभाग स्तर पर भर्ती में यह प्रावधान नहीं है कि कोटा पूरा करने के लिए दूसरे विभाग में ज्यादा पद इन वर्गों से भरे जाएं। सरकार ने सुप्रीम कोर्ट में इस मामले पर अपना पक्ष रखते हुए कहा था कि इससे आरक्षण पर प्रतिकूल असर पड़ेगा।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में 12 मई 2017 को 1930 शिक्षक थे। अगर विश्वविद्यालय को इकाई माना जाए तो अनुसूचित जाति के शिक्षक की संख्या 289 बनती है और विभाग को अगर इकाई मान लिया जाता है तो यह घटकर 119 हो जाएगी। अनुसूचित जन जाति की 143 से घटकर 29 हो जाएगी और पिछड़ों की 310 से घटकर 220 हो जाएगी। भारत सरकार ने 20 केन्द्रीय विश्वविद्यालयों का अध्ययन किया तो पाया कि 2662 की जगह पर 1241 पद ही रह जाएंगें। अनुसूचित जाति का 134 प्रोफेसर के स्थान पर 4 रह जाएंगें। जन जाति को जहां 59 प्रोफेसर होने चाहिए वहां शून्य हो जाएगा और पिछड़ा वर्ग का 11 से शून्य हो जाएगा। इस तरह से सामान्य वर्ग के पद 732 से बढ़कर 932 हो जाएंगें। असिसटैंट प्रोफेसर की श्रेणी में अनुसूचित जाति का 264 से घटकर 48, जन जाति का 131 से घटकर 6 और पिछड़ा वर्ग का 29 से घटकर 14 । इसी तरह से एसोसिएट प्रोफेसर और प्रोफेसर के पदों पर भी असर पड़ता है।

जब अनुसूचित जाति/जन जाति के लोग प्रोफेसर ही नहीं हो पाएंगें तो उन्हें वाइस चांसलर या उच्च पद पर जाने का मौका ही नहीं होगा। 2018 में कुल 496 केन्द्र और राज्य विश्वविद्यालयों में मात्र 6 अनुसूचित जाति, 6 जन जाति और 48 पिछड़े वर्ग से रहे हैं। सरकार बधाई की पात्र है कि अध्यादेश लाकर इस क्षति से बचाया। इतना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि और कुछ कदम उठाने हैं ताकि दलित, पिछड़े अल्पसंख्यक सभी को समुचित भागीदारी मिले। हार्वर्ड विश्वविद्यालय का नाम सुनते ही लोगों के कान खड़े हो जाते हैं लेकिन यह पता होना चाहिए कि वहां पर छात्र एवं शिक्षक सभी वर्गों से लिए जाते हैं। अमेरिका की इस नीति को अफर्मेटिव ऐक्शन कहते हैं, जबकि हमारे यहां आरक्षण कहा जाता है। भारत में यह अनिवार्य है जबकि वहां सलाह के रूप में है।

दुर्भाग्य है कि न्यायपालिका संसद से ज्यादा कानून बनाने लगी है, जबकि इनका कार्य यह है कि कानून जहां लागू न हो सके उसका पालन करवाएं। जन प्रतिनिधि जब कोई कानून बनाते हैं तो जनता की राय उसमें शामिल होती है, लेकिन जब जज बनाते हैं तो उनकी निजी राय हाबी हो जाती है और यही कारण है कि समाज में कटुता पैदा हो रही है। गलती करे न्यायपालिका और भुगते सरकार। इन दोनों मामलों में जनता ने सरकार को कटघरे में खड़ा करने की कोशिश किया जबकि उसका कोई लेना-देना नहीं है। जब ये निर्णय आए तो उसका भारी विरोध हुआ और उसकी परिणति यह रही कि जातीय संघर्ष का रूप होने लगा। संविधान में विधायिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र निर्धारित हैं। न्यायपालिका के द्वारा लगातार विधायिका और कार्यपालिका के क्षेत्र में अतिक्रमण हो रहा है, जिसकी वजह से तमाम सरकारी कार्यों में बाधा आ रही है, न्याय महंगा हो रहा है, वाजिब काम भी करने से लोग डर रहे हैं। राजनैतिक लोगों की आपसी लड़ाई का फायदा न्यायपालिका उठा रही है और जनता भी इस मामले में अनभिज्ञ है कि न्यायपालिका के भीतर क्या-क्या नहीं हो रहा है। आम आदमी हाई कोर्ट एवं सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा न्याय पाने के लिए नहीं खटखटा सकता है, क्योंकि वहां पर लाखों में फीस देनी पड़ती है। जजों ने फेस वैल्यू वाले वकील पैदा कर दिए हैं, जो दिन में एक करोड़ रूपये तक कमा लेते हैं। न्यायपालिका का काम न्याय करना होता है, न कि अन्याय। मैंने संसद में मुद्दा उठाया कि न्यायपालिका गरीब, दलित और पिछड़ा विरोधी है। दूसरे देशों की तरह हमारे यहां भी इस व्यवस्था के खिलाफ सड़क पर उतरना पड़ेगा, वरना वर्तमान व्यवस्था में न केवल समाज में कटुता पैदा होगी बल्कि बिना वजह सरकारें कटघरे में खड़ी की जाती रहेगीं।

+++

परिसंघ की बेबसाइट पर ऑनलाइन सदस्य बने एवं सहयोग राशि भेजें

अनुसूचित जाति/जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ की बेबसाइट पर अब ऑनलाइन सदस्यता का प्रावधान कर दिया गया है। www.aiparisangh.com बेबसाइट पर जाकर कोई भी सदस्यता शुल्क की ऑनलाइन पेमेंट करके वार्षिक एवं आजीवन सदस्य बन सकता है। इस पर डेबिट कार्ड, क्रेडिट कार्ड, नेट बैंकिंग आदि सभी माध्यमों से पेमेंट की जा सकती है। अब कोशिश रहे कि ज्यादातर ऑनलाइन ही किया जाए, फिर भी यदि सदस्यता फार्म और डोनेशन की रसीदें छपी हुई चाहिए तो **राष्ट्रीय कार्यालय में सुमित मो . 9868978306** से सम्पर्क किया जा सकता है।

परिसंघ के पदाधिकारियों से निवेदन है कि प्रयास करके अधिक से अधिक लोगों को सदस्य बनाएं। यदि प्रदेश या जिले स्तर के पदाधिकारी अन्य लोगों को सदस्य बना रहे हैं तो वे फार्म में रेफर्ड बाई के कॉलम में अपना नाम अवश्य लिखें, इससे राष्ट्रीय कार्यालय को पता लग सकेगा कि किस पदाधिकारी द्वारा कितना ऑनलाइन डोनेशन कराया गया है और उनके माध्यम से कितने सदस्य बनाए गए हैं। इसके अलावा बेबसाइट पर परिसंघ का संक्षिप्त परिचय, राष्ट्रीय अध्यक्ष का परिचय के साथ-साथ राष्ट्रीय एवं प्रदेश पदाधिकारियों के फोटो के साथ पता एवं मोबाइल नंबर भी दिया गया है, (http://aiparisangh.com/officebearers/) ताकि जो लोग अलग-अलग प्रदेशों से बेबसाइट देखें उन्हें पता लग सके कि उस प्रदेश के किस पदाधिकारी से सम्पर्क किया जा सकता है। इसके अलावा 'वॉयस ऑफ बुद्धा' भी बेबसाइट पर जाकर पढ़ा जा सकता है।

समाजसुधारक सावित्रीबाई फुले

(जन्म : 3 जपवरी, 1831 मृत्यु 10 मार्च,1897)

सावित्रीबाई फुले, भारत की प्रथम महिला शिक्षिका ही नहीं बल्कि वे एक अच्छी कवियित्री, अध्यापिका, समाजसेविका और पहली शिक्षाविद् भी थी। इसके अलावा उन्हें महिलाओं की मुक्तिदाता भी कहा जाता है। इन्होंने अपना पूरा जीवन में महिलाओं को शिक्षित करने में और उनका हक दिलवाने में लगा दिया। आपको बता दें कि महिलाओं को शिक्षा दिलवाने के लिए उन्हें काफी संघर्षो का भी सामना करना पड़ा, लेकिन वे हार नहीं मानी और बिना धैर्य खोए और पूरे आत्मविश्वास के साथ डटीं रहीं और सफलता हासिल की। इसके साथ ही आपको यह भी बता दें कि उन्होंने साल 1848 में पुणे में देश के पहले महिला स्कूल की भी स्थापना की। वहीं उन्हें अपने पति ज्योतिराव फुले के सहयोग से ही आगे बढ़ने की प्रेरणा मिली क्योंकि ज्योतिबा अक्सर उन्हें आगे बढ़ने के लिए उनका एक अच्छे गुरु और संरक्षक की तरह हौसला अफजाई करते रहे। भारत की पहली महिला शिक्षिका, कर्मठ समाजसेवी जिन्होंने समाज के पिछड़े वर्ग खासतौर पर महिलाओं के लिए कई कल्याणकारी काम किए। उन्हें उनकी मराठी कविताओं के लिए भी जाना जाता है।

सावित्रीबाई फुले की बायोग्राफी : भारत की महान समाजसेवी और प्रथम महिला शिक्षिका सावित्रीबाई फुले का जन्म महाराष्ट्र के सातारा जिले के नायगांव में 3 जनवरी 1831 को एक किसान परिवार में हुआ था। उनके पिता का नाम खण्डोजी नेवसे और माता का नाम लक्ष्मीबाई था।

सावित्री फुले का विवाह : उस समय भारत में बाल विवाह की परम्परा थी, जिसका शिकार वह भी हुईं और उनकी शादी साल 1840 में महज 9 साल की छोटी सी उम्र में 12 साल के ज्योतिराव फुले के साथ करवा दी गई।

सावित्रीबाई फुले की शिक्षा : जब सावित्रीबाई की शादी हुई थी, उस समय तक वे पढ़ी-लिखी नहीं थी। शादी के बाद ज्योतिबा ने ही उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाया। वहीं उन दिनों लड़कियों की दशा बेहद दयनीय थी यहां तक कि उन्हें शिक्षा ग्रहण करने की अनुमति नहीं थी। वहीं सावित्रीबाई को शिक्षित करने के दौरान ज्योतिबा को काफी विरोध का सामना करना पड़ा, यहां तक की उन्हें उनके पिता ने रुढ़िवादिता और समाज के डर से घर से बाहर निकाल दिया लेकिन फिर भी ज्योतिबा ने सावित्रीबाई को पढ़ाना नहीं छोड़ा और उनका एडमिशन एक प्रशिक्षण स्कूल में कराया। समाज की तरफ से इसका काफी विरोध होने के बाद भी सावित्रीबाई ने अपनी पढ़ाई पूरी की। अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद सावित्री बाई ने प्राप्त शिक्षा का इस्तेमाल अन्य महिलाओं को शिक्षित करने के लिए सोचा लेकिन यह किसी चुनौती से कम नहीं था क्योंकि उस समय समाज में लड़कियों की पढ़ाई-लिखाई करवाने की अनुमति नहीं थी। जिसके लिए उन्होंने तमाम संघर्ष किए और इस रीति को तोड़ने के लिए सावित्रीबाई ने अपने पति ज्योतिबा के साथ मिलकर साल 1848 में लड़कियों के लिए एक स्कूल की स्थापना भी की और यह भारत में लड़कियों के लिए खुलने वाला पहला महिला विद्यालय था। जिसमें कुल नौ लड़कियों ने एडमिशन लिया और सावित्रीबाई फुले इस स्कूल की प्रिंसिपल भी बनी। और इस तरह वे देश की पहली शिक्षिका बन गई।

सावित्रीबाई फुले कहा करती थीं : अब बिलकुल भी खाली मत बैठो, जाओ शिक्षा प्राप्त करो!

काफी संघर्षो के बाद भी छेड़ी महिला शिक्षा की मुहिम : वहीं थोड़े दिनों के बाद ही उनके स्कूल में दबी-पिछड़ी जातियों के बच्चे, खासकर लड़कियों की संख्या बढ़ती गई। वहीं इस दौरान उन्हें काफी परेशानियों का सामना करना पड़ा, बताया जाता है कि जब वो पढ़ाने जाती थी, तो उनका रोजाना घर से विद्यालय जाने तक का सफर बेहद कष्टदायक होता था। दरअसल जब वो घर से निकलती थी तो धर्म के कथित ठेकेदारों द्वारा उनके ऊपर सड़े टमाटर, अंडे, कचरा, गोबर और पत्थर तक फेंकते थे यही नहीं उन्हें अभद्र गालियां देते थे यहां तक की उन्हें जान से मारने की धमकियां भी देते थे। लेकिन सावित्रीबाई यह सब चुपचाप सहती रहीं और महिलाओं को शिक्षा दिलवाने और उनके हक दिलवाने के लिए पूरी हिम्मत और आत्मविश्वास के साथ डटीं रहीं। आपको बता दें कि काफी संघर्षो के बाद 1 जनवरी 1848 से लेकर 15 मार्च 1852 के बीच सावित्रीबाई फुले ने अपने पति ज्योतिबा फुले के साथ बिना किसी आर्थिक मदद से ज्यादा से ज्यादा लड़कियों को शिक्षित करने के मकसद से 18 स्कूल खोले। वहीं इन शिक्षा केन्द्र में से एक 1849 में पूना में ही उस्मान शेख के घर पर मुस्लिम स्त्रियों और बच्चों के लिए खोला था। इस तरह वे लगातार महिलाओं को उच्च शिक्षा दिलवाने के लिए काम करती रहीं। वहीं शिक्षा के क्षेत्र में सावित्रीबाई फुले और ज्योतिबा फुले के महत्वपूर्ण योगदान को देखते हुए ब्रिटिश सरकार के शिक्षा विभाग ने 16 नवम्बर 1852 को उन्हें शॉल भेंटकर सम्मानित भी किया।

सती प्रथा का विरोध किया और विधवा पुर्नविवाह कर स्त्रियों की दशा सुधारी :- सावित्रीबाई फुले ने केवल महिला की शिक्षा पर ही ध्यान नहीं दिया बल्कि स्त्रियों की दशा सुधारने के लिए भी उन्होंने कई महत्वपूर्ण काम किए। उन्होंने 1852 में "महिला मंडल" का गठन किया और भारतीय महिला आंदोलन की वे पहली अगुआ भी बनीं। सावित्री बाई नें विधवाओं की स्थिति को सुधारने, और बाल हत्या पर भी काम किया। उन्होंने इसके लिए विधवा पुनर्विवाह की भी शुरुआत की और 1854 में विधवाओं के लिए आश्रम भी बनाया। इसके अलावा उन्होंने नवजात शिशुओं का आश्रम खोला ताकि कन्या भ्रूण हत्या को रोका जा सके। वहीं आज जिस तरह कन्या भ्रूण हत्या के केस लगातार बढ़ रहे हैं और यह एक बड़ी समस्या के रूप में उभरकर सामने आ रही है। वहीं उस समय सावित्रीबाई ने शिशु हत्या पर अपना ध्यान केन्द्रित कर उसे रोकने की कोशिश की थी। उनके द्वारा उठाया गया यह कदम काफी महत्वपूर्ण और सराहनीय हैं। वहीं इस दौरान सावित्रीबाई फुले ने अपने पति ज्योतिबा फुले के साथ मिलकर काशीबाई नामक एक गर्भवती विधवा महिला को आत्महत्या करने से भी रोका था और उसे अपने घर पर रखकर उसकी अपने परिवार के सदस्य की तरह देखभाल की और समय पर उसकी डिलीवरी करवाई। फिर बाद में सावित्रीबाई और ज्योतिबा फुले ने उसके पुत्र यशवंत को गोद लेकर उसको खूब पढ़ाया लिखाया और बड़ा होकर यशवंत एक मशहूर डॉक्टर भी बने। वहीं इसकी वजह से भी उन्हें काफी विरोध का सामना करना पड़ा था लेकिन सावित्रीबाई रुढिवादिता से खुद को दूर रखती थी और समाज के कल्याण और महलिाओं के उत्थान के काम करने में लगी रहती थी।

दलितों के उत्थान के लिए किए काम :- महिलाओं के हित के बारे में सोचने वाली और समाज में फैली कुरोतियों को दूर करने वाली महान समाज सुधारिका सावित्रीबाई ने दलित वर्ग के उत्थान के लिए भी कई महत्वपूर्ण काम किए। उन्होंने समाज के हित के लिए कई अभियान चलाए। वहीं समाज के हित में काम करने वाले उनके पति ज्योतिबा ने 24 सितंबर 1873 को अपने अनुयायियों के साथ 'सत्यशोधक समाज' नामक एक संस्था का निर्माण किया। जिसके अध्यक्ष वह ज्योतिबा फुले खुद रहे जबकि इसकी महिला प्रमुख सावित्रीबाई फुले को बनाया गया था। आपको बता दें कि इस संस्था की स्थापना करने का मुख्य उद्देश्य शूद्रों और अति शूद्रों को उच्च जातियों के शोषण और अत्याचारो से मुक्ति दिलाकर उनका विकास करना था ताकि वे अपनी सफल जिंदगी व्यतीत कर सकें। इस तरह महिलाओं के लिए शिक्षा का द्वारा खोलने वाली सावित्रीबाई ने अपने पति ज्योतिबा के हर काम में कंधे से कंधे मिलाकर सहयोग किया।

कवयित्री के रूप में सावित्रीबाई फुले :- भारत की पहली शिक्षिका और समाज सुधारिका के अलावा वे एक अच्छी कवियित्री भी थी जिन्होंने दो काव्य पुस्तकें लिखी थी जिनके नाम नीचे लिखे गए हैं।

'काव्य फुले'
'बावनकशी सुबोधरत्नाकर'

बच्चों को स्कूल आने के लिए प्रेरित करने के लिए वे कहा करती थीं-

''सुनहरे दिन का उदय हुआ
आओ प्यारे बच्चों आज
हर्ष उल्लास से तुम्हारा स्वागत
करती हूं आज''

सावित्रीबाई की मृत्यु :- अपने पति ज्योतिबा की मौत के बाद भी उन्होंने समाज की सेवा करना नहीं छोड़ा। इस दौरान साल 1897 में पुणे में ''प्लेग'' जैसी जानलेवा बीमारी काफी खतरनाक तरीके से फैली, तो इस महान समाजसेवी ने इस बीमारी से पीड़ित लोगों की निच्छल तरीके से सेवा करनी शुरु कर दी और रात-दिन वह मरीजो की सेवा में लगी रहती थी, और इसी दौरान वो खुद भी इस जानलेवा बीमारी की चपेट में आ गई और 10 मार्च 1897 में उनकी मृत्यु हो गई। तमाम तरह की परेशानियों, संघर्षो और समाज के प्रबल विरोध के बावजूद भी सावित्रीबाई ने महिलाओं को शिक्षा दिलवाने और उनकी स्थिति में सुधारने में जिस तरह से एक लेखक, क्रांतिकारी, समाजिक कार्यकर्ता बनकर समाज के हित मे काम किया वह वाकई सरहानीय है। वहीं महिला शिक्षा के क्षेत्र में योगदान के लिए उन्हें कई पुरस्कार से भी नवाजा जा चुका है। इसके अलावा केंद्र और महाराष्ट्र सरकार ने सावित्रीबाई फुले की स्मृति में कई पुरस्कारों की स्थापना की है और उनके सम्मान में एक डाक टिकट भी जारी किया गया है। उनके द्वारा समाज में दिए गए महत्वपूर्ण योगदान को हमेशा याद रखा जाएगा और इसके लिए हमारा देश उनका हमेशा कर्जदार रहेगा। भारत की ऐसी क्रांतिकारी और महान समाजसेविका को भावपूर्ण श्रद्धांजली अर्पित करती हैं और उन्हें शत-शत नमन करती है।

https://www.gyanipandit.com/savitribai-phule-information-in-hindi-with-biography/

✦✦✦

महाड़ सत्याग्रह के नब्बे साल : जब पानी में आग लगी थी

डॉ. आंबेडकर के नेतृत्व में चलाया गया महाड सत्याग्रह शूद्रो-अतिशूद्रों के संघर्षो के इतिहास की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। इसके माध्यम से ब्राह्मणवाद-मनुवाद को खुली चुनौती दी गई थी। इस सत्याग्रह के नब्बे वर्ष पूरे हो रहे हैं। क्या है इसकी ऐतिहासिक मह्ता, क्या है इसकी प्रासंगिकता बता रहे हैं, सुभाष गाताडे :

भारत के सामाजिक आन्दोलन में महाड़ क्रान्ति दिवस के नाम से जाने जाते चवदार तालाब के ऐतिहासिक सत्याग्रह को तथा उसके दूसरे दौर में मनुस्मृति दहन की चर्चित घटना को दलित शोषितों के विमर्श में वही स्थान, वही दर्जा प्राप्त है जो हैसियत फ्रांसिसी क्रांति की यादगार घटनाओं से सम्बन्ध रखती है। यूं कहने के लिए तो उस दिन दलितों ने और ऐसे तमाम लोगों ने जो अस्पृश्यता की समाप्ति के लिए संघर्षरत थे, महज तालाब का पानी पिया था लेकिन रेखांकित करनेवाली बात यह थी कि इस छोटे से दिखनेवाले इस कदम के जरिये उन्होंने हजारों साल से जकड़ बनायी हुई ब्राहमणवादी व्यवस्था के खिलाफ बगावत का ऐलान किया था। जानवरों को भी जिस तालाब पर जाने की मनाही नहीं थीं, वहां पर इन्सानियत के एक हिस्से पर धर्म के नाम पर सदियों से लगायी गयी इस पाबंदी को तोड़ कर वह सभी नयी इबारत लिख रहे थे। यह अकारण नहीं कि महाड़ सत्याग्रह के बारे में मराठी में गर्व से कहा जाता है कि वही घटना 'जब पानी में आग लगी थी' उसने न केवल दलित आत्मसम्मान की स्थापना की बल्कि एक स्वतंत्रत राजनीतिक सामाजिक ताकत के तौर पर उनके भारतीय जनता के बीच अपने आगमन का संकेत दिया था। दलितों द्वारा खुद अपने नेतृत्व में की गयी यह मानवाधिकारों की घोषणा एक ऐसा हुंकार था जिसने भारत की सियासी तथा समाजी हलचलों की शक्लोसूरत हमेशा के लिए बदल दी।

एक हिन्दू पुरुष या स्त्री, जो कुछ भी वह करते हैं, वह धर्म का पालन कर रहे होते हैं। एक हिन्दू धार्मिक तरीके से खाना खाता है, पानी पीता है, धार्मिक तरीके से नहाता है या कपड़े पहनता है, धार्मिक तरीके से ही पैदा होता है, शादी करता है और मृत्यु के बाद जला दिया जाता है। उसके सभी काम पवित्र काम होते हैं। एक धर्मनिरपेक्ष नजरिये से वह काम कितने भी गलत क्यों न लगें, उसके लिए वह पापी नहीं होते क्योंकि उन्हें धर्म के द्वारा स्वीकृति मिली होती है। अगर कोई हिन्दू पर पाप करने का आरोप लगाता है, उसका जवाब होता है, 'अगर मैं पाप करता हूं, तो मैं धार्मिक तरीके से ही पाप करता हूं।'

('द अनटचेबल्स एण्ड द पॅक्स ब्रिटानिका' डाक्टर भीमराव अम्बेडकर)

वह तीस का दशक था जिसने ऐतिहासिक महाड सत्याग्रह को एक पृष्ठभूमि प्रदान की। सभी जानते हैं कि देश और दुनिया के पैमाने पर यह एक झंझावाती काल था। महान सर्वहारा अक्तूबर क्रांति के पदचाप भारत में भी सुनाई दे रहे थे। नये आधार पर एक नयी कम्युनिस्ट पार्टी बनाने की योजनाएं आकार ग्रहण कर रही थीं। यही वह काल था जब गांधी के नेतृत्ववाली कांग्रेस तथा मुस्लिम लीग ने असहयोग आन्दोलन में जोरदार हिस्सा लिया था। जातिप्रथा की मुखालिफत करते हुए देश के अलग अलग हिस्सों में राजनीतिक सामाजिक हलचलें भी इन दिनों तेज हो रही थीं। पतुआखली, वैकोम आदि स्थानों पर होनेवाले सत्याग्रहों के जरिये ब्राहमणवाद तथा जातिप्रथा की जकड़न को चुनौती दी जा रही थी। यही वह दौर था जब असहयोग आन्दोलन की असमय समाप्ति के बाद देश में साम्प्रदायिक तनाव बढ़ने के मसले सामने आने लगे थे और हिन्दू तथा मुस्लिम साम्प्रदायिक संगठनों की गतिविधियों में तेजी देखी गयी थी। इसी पृष्ठभूमि में वर्ष 1923 में बम्बई विधान परिषद् में रावसाहेब बोले की पहल पर यह प्रस्ताव पारित हुआ कि सार्वजनिक स्थानों पर दलितों के साथ होने वाले भेदभाव पर रोक लगायी जाये। बहुमत से पारित इस प्रस्ताव के बावजूद तीन साल तक यह प्रस्ताव कागज पर ही बना रहा। उसके न अमल होने की स्थिति में 1926 में जनाब बोले ने नया प्रस्ताव रखा कि सार्वजनिक स्थानों, संस्थानों द्वारा इस पर अमल न करने की स्थिति में उनको मिलने वाली सरकारी सहायता राशि में कटौती की जाय।

विलायत से अपनी पढ़ाई पूरी करके लौटे बाबासाहेब आम्बेडकर दलितों शोषितों के बीच जागृति तथा संगठन के काम में जुटे थे, उन्हीं दिनों महाड़ तथा आसपास के कोंकण के इलाके के दलितों के बीच सक्रिय लोगों ने एक सम्मेलन की योजना बनायी तथा उसके लिए डॉ. अंबेडकर को आमंत्रित किया। इस सम्मेलन के प्रमुख संगठनकर्ता थे रामचंद्र बाबाजी मोरे (1903-1972) जिन्होंने अपनी सामाजिक गतिविधियों से पहले से इलाके में अलग पहचान बनायी थी और उनकी अगुआई में कुछ माह पहले ही क्राफोर्ड तालाब सत्याग्रह का आयोजन हुआ था जिसमें सार्वजनिक जल स्रोतों पर दलितों के समान अधिकार का दावा रेखांकित किया गया था। बाद में रामचंद्र मोरे कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सक्रिय हुए और मुंबई की ऐतिहासिक गिरणी कामगार यूनियन के संस्थापक सदस्य बने। इसे संयोग कहा जाना चाहिए कि महाड़ ही वह भूमि थी जहाँ पर बाबासाहेब के पूर्ववर्ती महात्मा फुले द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज के दलित समाज के अग्रणी कार्यकर्ता गोपालबुवा वलंगकर ने अपने जनजागृति की शुरूआत की थी। महाड़ उसी कोंकण का इलाका है जहां के एक गांव के स्कूल में बाबासाहब का बचपन बीता था। तीसरा अहम संयोग यह था कि बम्बई विधानपरिषद के प्रस्ताव के बाद महाड़ नगरपालिका ने अपने यहां एक प्रस्ताव पारित कर अपने यहां के तमाम सार्वजनिक स्थान दलितों के लिए खुले करने का निर्णय लिया था। महाड़ के वीरेश्वर थिएटर में हो रहे इस सम्मेलन में लगभग तीन हजार लोग एकत्रित थे जिनमें महिलाएं भी भारी संख्या में उपस्थित थीं। गं.नी. सहस्त्रबुद्धे, अनंत चित्रे, शंकरभाई धारिया, तुलजाभाई, सुरेन्द्रनाथ टिपणीस जैसे समाज सुधारों के लिए अनुकूल सवर्ण भी शामिल थे। ये वही सुरेन्द्रनाथ टिपणीस थे जिन्होंने महाड़ नगरपालिका द्वारा प्रस्ताव पारित कराने में पहल ली थी। सवर्णो की इस उपस्थिति के दो निहितार्थ थेरू एक पहलू यह था कि जातिभेद के उन्मूलन के लिए या समाज सुधार के लिए इनमें से एक छोटा तबका तत्पर था तथा उन्हें बाबासाहब के नेतृत्व पर भी यकीन था। दूसरे बाबासाहेब का अपना दृष्टिकोण सर्वसमावेशी था तथा वे ब्राहमणवाद की समाप्ति के लिए सभी तरह के लोगों को साथ लेकर चलने के लिए तैयार थे। सम्मेलन के अपने धारदार भाषण में बाबासाहब ने सदियों से चली आ रही ब्राहमणवाद की गुलामी की मानसिकता से विद्रोह करने के लिए दलितों तथा अन्य शोषितों का आवाहन किया। महाड़ सत्याग्रह की चर्चित घोषणा में उन्होंने कहा कि? ''तीन चीजों का तुम्हें परित्याग करना होगा। उन कथित गंदे पेशों को छोड़ना होगा जिनके कारण तुम पर लांछन लगाये जाते हैं। दूसरे, मरे हुए जानवरों का मांस खाने की परम्परा को भी छोड़ना होगा। और सबसे अहम है कि तुम उस मानसिकता से मुक्त हो जाओ कि तुम 'अछूत' हो ।''

उनका यह भी कहना था कि ?

''क्या यहां हम इसलिये आये हैं कि हमें पीने के लिए पानी मयस्सर नहीं होता है ? क्या यहां हम इसलिये आये हैं कि यहां के जायकेदार कहलानेवाले पानी के हम प्यासे हैं ? नहीं, दरअसल इन्सान होने का हमारा हक जताने हम यहां आये हैं ।'' सम्मेलन की औपचारिक समाप्ति तथा धन्यवाद ज्ञापन के बाद जिसे महाड़ के सामाजिक कार्यकर्ता अनंत चित्रे ने रखा, उन्होंने बाद में सम्मेलन को सम्बोधित किया और लोगों का आवाहन किया कि प्रस्तुत सम्मेलन को एक महत्वपूर्ण काम को अंजाम दिए बिना पूरा नहीं समझा जाना चाहिए। उनका कहना था कि समाज में जारी छूआछूत की प्रथा के चलते आज भी इलाके के दलितों को चवदार तालाब दृ जो सार्वजनिक तालाब है उसमें से पानी लेने नहीं दिया जाता। महाड़ नगरपालिका द्वारा इस सम्बन्ध में प्रस्ताव पारित किए जाने के बावजूद वह कागज पर ही बना हुआ है। अगर यह सम्मेलन इस प्रथा की समाप्ति के लिए आगे आता है तो यह कहा जा सकेगा कि इसने एक महत्वपूर्ण कार्यभार पूरा किया। चित्रे के चंद शब्दों ने पूरे जनसमूह को आंदोलित किया और वह डॉ अंबेडकर की अगुआई में कतारबद्ध होने लगे। 20 मार्च की तपती दुपहरिया में लगभग चार हजार की तादाद में वहां जमा जनसमूह ने चवदार तालाब की ओर कूच किया । समूचे महाड़ नगर में उनका अनुशासित जुलूस आगे बढ़ा। जुलूस में शामिल लोग नारे लगा रहे थे 'महात्मा गांधी की जय', 'शिवाजी महाराज की जय', 'समानता की जय'।

जुलूस तालाब पर जाकर रुका और फिर सबसे पहले अम्बेडकर ने अपनी अंजुरी भर पानी पिया और फिर जुलूस में शामिल हजारों लोगों ने पानी पीया। गौरतलब है कि इस ऐतिहासिक सत्याग्रह में गैरब्राहमण आन्दोलन के शीर्षस्थ नेताओं के साथ साथ मेहनतकशों के आन्दोलन से जुड़े क्षेत्रीय कार्यकर्ता भी शामिल थे । अछूतों द्वारा चवदार तालाब पर पानी पीने की घटना से बौखलाये सवर्णो ने यह अफवा फैला दी कि चवदार तालाब को अपवित्र करने के बाद ये 'अछूत' वीरेश्वर मन्दिर पर धावा बोलनेवाले हैं। पहले से ही तैयार सवर्ण युवकों की अगुआई में सभा स्थल पर लगे तम्बू कनात पर हमला करके कई लोगों को घायल किया गया। दलितों के इस ऐतिहासिक विद्रोह के प्रति मीडिया की प्रतिक्रिया में भी उसके जातिवादी आग्रह साफ दिख रहे थे। कई सारे समाचार पत्रों ने डॉ. आम्बेडकर के इस बागी तेवर के खिलाफ आग उगलना शुरू किया। 'भाला' नामक अख़बार जो सनातनी हिन्दुओं का पक्षधर था उसने 28 मार्च को दलितों को सम्बोधित करते हुए लिखा : ''.. आप लोग मन्दिरों और जलाशयों को छूने की कोशिशें तुरंत बन्द कीजिये। और अगर ऐसा नहीं किया गया तो हम तुम लोगों को सबक सीखा देंगे।''

इसके जवाब में बाबासाहब ने लिखा कि:

'' ..जो हमें सबक सीखाने की बात कर रहे हैं हम उनसे भी निपट लेंगे ।..''

बहरहाल जिस तरह का आलम था उसके इस बात की जरूरत महसूस की गयी कि अपनी बात जनमानस तक पहुंचाने के लिए एक स्वतंत्र अख़बार होना चाहिए। पहले निकाले जाते रहे अख़बार 'मूकनायक' का प्रकाशन बन्द हो चुका था। इस जरूरत को पूरा करने के लिए सत्याग्रह की समाप्ति के बाद बम्बई लौटने पर चन्द दिनों के अन्दर ही 'बहिष्कृत भारत' नामक अखबार का प्रकाशन शुरू किया गया। प्रवेशांक निकला था 3 अप्रैल 1927 को। अपने इस अखबार के जरिये न केवल नवोदित दलित आन्दोलन ने उसके खिलाफ शुरू हो रहे अनर्गल प्रचार का जवाब देने की कोशिश की बल्कि सकारात्मक ढंग से अपनी समूची परियोजना को भी लोगों के सामने रखने के काम की शुरूआत की।

22 अप्रैल के अंक में बाबासाहब ने लिखा :

''...महात्मा गांधी की तरह आज तक हम लोग भी यही मानते आये थे कि अस्पृश्यता यह हिन्दूधर्म के ऊपर लगा कलंक है। लेकिन अब हमारी आंखें खुली हैं और हम समझ रहे हैं कि यह हमारे शरीर पर लगा कलंक है। जब तक हम इसे हिन्दूधर्म पर लगा कलंक समझते थे तब तक इस काम को हमने आप लोगों पर सौंपा था लेकिन अब हमें इस बात का एहसास हुआ है कि यह हमारे शरीर पर लगा कलंक है तो इसे खत्म करने के पवित्र काम को हमने खुद स्वीकारा है। महाड़ सत्याग्रह का दूसरा चरण पहले जितना ही क्रांतिकारी था। यह महसूस किया गया था कि यूं तो कहने के लिए महाड़ सत्याग्रह के अन्तर्गत 'चवदार तालाब' पर पानी पीने या छूने के लिए दलितों पर लगायी गयी सामाजिक पाबंदी तोड़ दी गयी थी लेकिन अभी भी यह लड़ाई तो अधूरी ही रह गयी है। घटना के दूसरे ही दिन महाड़ के सवर्णो ने 'अछूतों' के स्पर्श से 'अपवित्र' हो चुके चवदार तालाब के शुद्धीकरण को अंजाम दिया था। घटना के चन्द दिनों के बाद महाड़ नगरपालिका ने अपनी एक बैठक में अपने पहले प्रस्ताव को वापस लिया था। तथा महाड़ के चन्द सवर्णो ने अदालत में जाकर यह दरखास्त दी थी कि यह 'चवदार तालाब' दरअसल 'चौधरी तालाब' है और यह कोई सार्वजनिक स्थान नहीं है। गौरतलब है कि अदालत ने उनकी याचिका स्वीकार की थी और फैसले के लिए अगली तारीख मुकर्रर की थी। तय किया गया कि 25-26 दिसम्बर को महाड़ सत्याग्रह के अगले चरण को अंजाम दिया जाएगा। उसके लिए हैण्डबिल प्रकाशित किये गये तथा उसकी तैयारी के लिए जगह-जगह सम्मेलन भी आयोजित किये गये। बम्बई में इसी के लिए आयोजित एक सभा में 3 जुलाई 1927 को बाबासाहब ने कहा ''.. सत्याग्रह का अर्थ लड़ाई। लेकिन यह लड़ाई तलवार, बंदूकों, तोप तथा बमगोलों से नहीं करनी है बल्कि हथियारों के बिना करनी है। जिस तरह पतुआखली, वैकोम जैसे स्थानों पर लोगों ने सत्याग्रह किया उसी तरह महाड़ में हमें सत्याग्रह करना है। इस दौरान सम्भव है कि शान्तिभंग के नाम पर सरकार हमें जेल में डालने के लिए तैयार हो इसलिये जेल जाने के लिए भी हमें तैयार रहना होगा।.. सत्याग्रह के लिए हमें ऐसे लोगों की जरूरत है जो निर्भीक तथा स्वाभिमानी हों। अस्पृश्यता यह अपने देह पर लगा कलंक है और इसे मिटाने के लिए जो प्रतिबद्ध हैं वही लोग सत्याग्रह के लिए अपने नाम दर्ज करा दें। 27 नवम्बर के अपने लेख में बाबासाहब ने सरकार को यह भी चेतावनी दी कि उसके साथ न्याय के रास्ते में अगर बाधाएं खड़ी की गयीं तो वह अपनी समस्या को दुनिया के सामने रखने में भी नहीं हिचकेगा।''... सरकार कितने लोगों को जेल भेजेगी ? कितने दिन जेल में रखेगी ?... शान्तिभंग के नाम पर अगर

शेष पृष्ठ 5 पर

महिला सशक्तिकरण को ''फ्रीडम अवार्ड्स'' का सलाम

10 मार्च 2019, आज उत्तर-पश्चिम दिल्ली सांसद डॉ. उदित राज एवं बुद्धा एजुकेशन फाउंडेशन की ओर से लगभग 2000 महिला प्रतिनिधियों ने रॉयल पेपर बैंक्वेट हॉल, पीरागढ़ी, नई दिल्ली पर विशाल सम्मलेन में भाग लिया और अन्तराष्ट्रीय महिला दिवस मनाया गया । दशकों बीत गए फिर भी जितनी भागीदारी, सम्मान और आर्थिक निर्भरता महिला समाज में होना चाहिए वह सपना ही बनकर रह गया है, इस सम्मेलन में विशेष रूप से महिलाओं की स्वतंत्रता का विषय रहा है । लड़कियां, महिलायें पढने-लिखने के बावजूद विभिन्न क्षेत्र जैसे आर्थिक, राजनैतिक, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि में योगदान नही दे पा रही हैं क्योंकि स्वतंत्रता का अभाव है । इस अवसर पर उन महिलाओं को "फ्रीडम अवार्ड" से सम्मानित किया गया जिन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में अपना योगदान दिया है । भारतीय समाज की समस्याएं अमेरिका और यूरोप या अन्य देशों से भिन्न है, हमारे समाज में आर्थिक परतंत्रता से ज्यादा कहीं सड़े-गले रीति-रिवाजों से है । मानसिक रूप से जितना शोषण महिलाओं का हमारे समाज में होता है उतना आर्थिक नही, पढ़ी-लिखी एवं सक्षम महिलायें भी आजादी के अभाव में अपनी क्षमता का उपयोग कर नही पाती हैं । लगातार सीबीएससी के 10वीं और 12वीं कक्षा में लड़कियां लड़कों से ज्यादा अच्छा कर रही हैं और यह उदाहरण समझने को काफी है कि जहाँ पर पुरुषवादी सोंच अवरोध नही बनती है वहां पर ये किसी से कम नही हैं । पढाई-लिखाई और परीक्षा की तैयारी, स्कूल या घर में की जाती है जहाँ पर सुरक्षा की समस्या नही है, इसलिए लड़कों से बेहतर करती है लेकिन व्यवहारीक और बाहरी दुनिया में किसी समय आना-जाना पड़ता है, कार्यस्थल पर भी पुरुषवादी सोंच होती है और इसके अलावा, तमाम रीति-रिवाज के बंधन भी आ खड़े होते हैं इसलिए आजाद रूप से न काम करने के वजह से पिछड़ जाती हैं

डॉ. उदित राज अपनी पत्नी सीमा राज जी के साथ विभिन्न क्षेत्र में सराहनीय कार्य करने वाली महिलाओं को फ्रीडम अवार्डस से सम्मानित करते हुए।

बुद्धा एजुकेशन फाउंडेशन उत्तर-पश्चिम दिल्ली लोकसभा में लगभग 11, 000 महिलाओं को कौशल प्रशिक्षण दे चुका है । इसके अतिरिक्त घर पर ही जॉब वर्क उपलब्ध कराया जाता है ताकि महिलाएं आर्थिक रूप से सक्षम हो सके। वर्तमान में 10,000 लोगों का पूरा हेल्थ चेक अप का अभियान चलाया जा रहा है । खामपुर और झीमरपुर के उन घरों में जहाँ शौचालय नही था वहां सुविधा देकर के स्वच्छ भारत के उद्देश्य को पूरा किया । उन स्कूलों में जहाँ प्रोजेक्टर, कंप्यूटर, पानी आदि पीने की सुविधा नही थी वहां पर मुहैया कराया । सिलाई-कढाई केंद्र भी चल रहे हैं। बुद्धा एजुकेशन फाउंडेशन के अध्यक्ष डॉ. उदित राज ने कहा कि "भारत जब तक विकसित देशों की श्रेणी में नही जबतक कि महिलाओं की भागीदारी बढती नही है । भारत में महिलाओं का कुल घरेलू सकल उत्पाद में 17 प्रतिशत योगदान है, जो बहुत कम है । जहाँ तक लेबर फोर्स पार्टिसिपेशन रेट है वह भी बेहद निराशाजनक है, सन 2004 में 35 प्रतिशत हुआ करता था जो घटकर 25 प्रतिशत हो गया अतः हर क्षेत्र में चिंताजनक स्थिति दिखाई पड़ती है।

इस विशाल सम्मेलन की तैयारी में श्री गौरव ग्रोवर, श्रीमती रचना शर्मा, श्रीमती सुप्रीत राज का विशेष सहयोग रहा है। हम उनको भी धन्यवाद देते हैं जिन्होंने फ्रीडम अवार्ड्स पाने वालों का मनोबल बढ़ाने के लिए उपहार दिए जैसे केवीआई फैशन हाउस से श्रीमती जसमीत कौर, वेलवेट बैग्स से नकुल गांधी, अल्प से श्रीमती भारती तनेजा आदि । उन्होंने अपने क्षेत्र में अद्वितीय सहयोग दिए हैं।

महाड़ सत्याग्रह के नब्बे साल.....

पृष्ठ 3 का शेष

सरकार हमारे न्याय अधिकारों के आड़े आएगी तो हम सुधरे हुए देशों का जो राष्ट्रसंघ बना है उसके पास फरियाद करके सरकार के अन्यायी रूख को बेपद करेंगे। 25 दिसम्बर को चार बजे हजारों जनसमूह की भीड़ के बीच सम्मेलन की शुरूआत हुई। प्रस्तुत सम्मेलन के लिए महज महाड़ और उसके आसपास से ही नहीं बल्कि समूचे महाराष्ट्र से जातिभेद का उन्मूलन में रूचि रखनेवाले लोग जुटे थे। समूचे मण्डप में अलग अलग नारे लिख कर लगाये गये थे। गांधी के नेतृत्व के बारे में दलित आन्दोलन में तब तक व्याप्त मोह की झलक इस बात से भी मिल रही थी कि वहां महज एक ही तस्वीर लटकी थी और वह थी गांधी की। सम्मेलन के शुरूआत में उन बधाई सन्देशों को पढ़ कर सुनाया गया जो जगह जगह से आये थे। इसमें एक महत्वपूर्ण सन्देश था लोकमान्य तिलक के सुपुत्र श्रीधर तिलक का जो जातिभेद उन्मूलन के काम में लगे थे तथा इसके लिए एक अलग संस्था बना कर काम कर रहे थे।

सम्मेलन के अपने शुरूआती वक्तव्य में बाबासाहेब ने प्रस्तुत सत्याग्रह परिषद का उद्देश्य स्पष्ट किया '' अन्य लोगों की तरह हम भी इन्सान है इस बात को साबित करने के लिए हम तालाब पर जाएंगे। अर्थात यह सभा समता संग्राम की शुरूआत करने के लिए ही बुलायी गयी है। आज की इस सभा और 5 मई 1789 को फ्रांसीसी लोगों की क्रांतिकारी राष्ट्रीय सभा में बहुत समानताएं हैं। .. इस राष्ट्रीय सभा ने राजा-रानी को सूली पर चढ़ाया था, सम्पन्न तबकों के लिए जीना मुश्किल कर दिया था, उनकी सम्पत्ति जब्त की थी । 15 साल से ज्यादा समय तक समूचे यूरोप में इसने अराजकता पैदा की थी ऐसा इस पर आरोप लगता है। मेरे खयाल से ऐसे लोगों को इस सभा का वास्तविक निहितार्थ समझ नहीं आया।.. इसी सभा ने 'जन्मजात मानवी अधिकारों को घोषणापत्र जारी किया था.. इसने महज फ्रान्स में ही क्रान्ति को अंजाम नहीं दिया बल्कि समूची दुनिया में एक क्रांति को जनम दिया ऐसा कहना अनुचित नहीं होगा''

उन्होंने अपील की थी इस सभा को फ्रेंच राष्ट्रीय सभा का लक्ष्य अपने सामने रखना चाहिए..'' हिन्दुओं में व्याप्त वर्णव्यवस्था ने किस तरह विषमता और विघटन के बीज बोये हैं इस पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि ''समानता के व्यवहार के बिना प्राकृतिक गुणों का विकास नहीं हो पाता उसी तरह समानता के व्यवहार के बिना इन गुणों का सही इस्तेमाल भी नहीं हो पाता। एक तरफ से देखें तो हिन्दू समाज में व्याप्त असमानता व्यक्ति का विकास रोक कर समाज को भी कुंठित करती है और दूसरी तरफ यही असमानता व्यक्ति में संचित शक्ति का समाज के लिए उचित इस्तेमाल नहीं होने देती। ..''सभी मानवों की जनम के साथ बराबरी की घोषणा करता हुआ मानवी हकों का एक ऐलाननामा भी सभा में जारी हुआ। सभा में चार प्रस्ताव पारित किये गये जिसमें जातिभेद के कायम होने के चलते स्थापित विषमता की भर्त्सना की गयी तथा यह भी मांग की गयी कि धर्माधिकारी पद पर लोगों की तरफ से नियुक्ति हो। इसमें से दूसरा प्रस्ताव मनुस्मृतिदहन का था जिसे सहस्त्राबुद्धे नामक एक ब्राहमण जाति के सामाजिक कार्यकर्ता ने प्रस्तुत किया था। प्रस्ताव में कहा गया था कि ''शूद्र जाति को अपमानित करने वाली उसकी प्रगति को रोकने वाली उसके आत्मबल को नष्ट कर उसके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक गुलामी को मजबूती देने वाली मनुस्मृति के श्लोकों को देखते हुए ऐसे जनद्रोही और इन्सान विरोधी ग्रंथ को हम आज आग के हवाले कर रहे हैं।''

शाम को सभा-स्थान पर पहले से तैयार किये गये एक यज्ञकुण्ड में मनुस्मृति को आग के हवाले किया गया। यज्ञकुण्ड के आसपास 'अस्पृश्यता नष्ट करो' 'पुरोहितशाही का विध्वंस करो' जैसे बैनर लगे थे। सभा के दूसरे दिन स्थानीय कलेक्टर ने अदालत की ओर से जारी उस स्थगनादेश की प्रतियां सम्मेलन को सौंपी जिसमें कहा गया था कि 'फिलहाल तालाब पर यथास्थिति बनायी रखी जाय अर्थात् उसमें दलितों को वहां का पानी छूने से मना किया गया था। निश्चित ही वह एक बेहद उलझन का समय था। एक तरफ सत्याग्रहियों का विशाल जनसमूह था जो 'चवदार तालाब पर सत्याग्रह के लिए तैयार था और जिसके लिए जेल जाने के लिए भी तैयार था दूसरी तरफ था सरकार का वह आदेश जिसके तहत इस पर पाबंदी लगा दी गयी थी। रात भर विचार-विमर्श चलता रहा। अन्त में सत्याग्रह स्थगित करने का कटु फैसला लिया गया। 27 दिसम्बर के अपने भाषण में डॉ. आम्बेडकर ने कहा कि मुझे आपकी ताकत का अन्दाजा है । लेकिन अपनी शक्ति का उपयोग समय स्थान देख कर किया जाना चाहिये ऐसा मुझे लगता है। सवर्णों ने सब तरफ से दमन का चक्र चलाया है। व्यापारियों ने बाजार बन्द किया है। भूस्वामी (खोत) खेत नहीं दे रहे हैं। किसान लोग जानवरों को उठा ले जा रहे हैं।'' इसके बाद बाबा साहेब ने विशेषकर महिलाओं को सम्बोधित करते हुए लम्बा वक्तव्य दिया जिसमें उन्हें सामाजिक समता लाने की लड़ाई में जोरों से आगे आने की अपील की गयी थी।

भारतीय चुनाव प्रक्रिया

सी.एल. मौर्य

चुनाव लोकतंत्र का आधार स्तम्भ हैं। आज़ादी के बाद से भारत में चुनावों ने एक लंबा रास्ता तय किया है।

1951-52 को हुए आम चुनावों में मतदाताओं की संख्या 17,32,12,343 थी, जो 2014 में बढ़कर 81,45,91,184 हो गई है।(1) 2004 में, भारतीय चुनावों में 670 मिलियन मतदाताओं ने भाग लिया (यह संख्या दूसरे सबसे बड़े यूरोपीय संसदीय चुनावों के दोगुने से अधिक थी) और इसका घोषित खर्च 1989 के मुकाबले तीन गुना बढ़कर +300 मिलियन हो गया। इन चुनावों में दस लाख से अधिक इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का इस्तेमाल किया गया।(2) 2009 के चुनावों में 714 मिलियन मतदाताओं ने भाग लिया (3) (अमेरिका और यूरोपीय संघ की संयुक्त संख्या से भी अधिक) (4) मतदाताओं की विशाल संख्या को देखते हुए चुनावों को कई चरणों में आयोजित किया जाना आवश्यक हो गया है (2004 के आम चुनावों में चार चरण थे और 2009 के चुनावों में पांच चरण थे)। चुनावों की इस प्रक्रिया में चरणबद्ध तरीके से काम किया जाता है, इसमें भारतीय चुनाव आयोग द्वारा चुनावों की तिथि की घोषणा, जिससे राजनैतिक दलों के बीच ''आदर्श आचार संहिता" लागू होती है, से लेकर परिणामों की घोषणा और सफल उम्मीदवारों की सूची राज्य या केंद्र के कार्यकारी प्रमुख को सौंपना शामिल होता है। परिणामों की घोषणा के साथ चुनाव प्रक्रिया का समापन होता है और नई सरकार के गठन का मार्ग प्रशस्त होता है।

राष्ट्रीय चुनावों की सूची

राज्य सभा चुनाव

राज्य सभा के सदस्यों का चयन अप्रत्यक्ष रूप से होता है और ये लगभग पूरी तरह से अलग-अलग राज्यों की विधानसभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किए जाते हैं, जबकि 12 सदस्यों का नामांकन भारत के राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है, इसमें आमतौर पर भारत के प्रधानमंत्री की सलाह और सहमति शामिल होती है।

राष्ट्रपति चुनाव

भारत के राष्ट्रपति का चुनाव 5 साल के लिए अप्रत्यक्ष रूप से किया जाता है। इसके लिए निर्वाचन मंडल का प्रयोग किया जाता है जहां लोक सभा व राज्य सभा के सदस्य और भारत के सभी प्रदेशों तथा क्षेत्रों की विधान सभाओं के सदस्य अपना वोट डालते हैं।

भारतीय चुनाव प्रणाली

भारतीय संसद में राष्ट्रप्रमुख- भारत के राष्ट्रपति - और दो सदन शामिल हैं जो विधानमंडल होते हैं। भारत के राष्ट्रपति का चुनाव पांच वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचक मंडल द्वारा किया जाता है जिसमें संघ और राज्य के विधानमंडलों के सदस्य शामिल होते हैं।

भारत की संसद के दो सदन हैं। लोक सभा में 545 सदस्य होते हैं, 543 सदस्यों का चयन पांच वर्षों की अवधि के लिए एकल सीट निर्वाचन क्षेत्रों से होता है और दो सदस्यों को एंग्लो-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुना जाता है (भारतीय संविधान में उल्लेख के अनुसार, अब तक लोक सभा में 545 सदस्य होते हैं, 543 सदस्यों का चयन पांच वर्षों की अवधि के लिए होता है और दो सदस्यों को एंग्लो-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुना जाता है)। 550 सदस्यों का चयन बहुमत निर्वाचन प्रणाली के तहत होता है।

राज्यों की परिषद (राज्य सभा) में 245 सदस्य होते हैं, जिनमें 233 सदस्यों का चयन छह वर्ष की अवधि के लिए होता है, जिसमें हर दो साल में एक तिहाई अवकाश ग्रहण करते हैं। इन सदस्यों का चयन राज्य और केंद्र (संघ) शासित प्रदेशों के विधायकों द्वारा किया जाता है। निर्वाचित सदस्यों का चयन आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के तहत एकल अंतरणीय मत के माध्यम से किया जाता है। बारह नामित सदस्यों को आमतौर पर प्रख्यात कलाकारों (अभिनेताओं सहित), वैज्ञानिकों, न्यायविदों, खिलाड़ियों, व्यापारियों और पत्रकारों और आम लोगों में से चुना जाता है।

चुनाव आयोग

भारत में चुनावों का आयोजन भारतीय संविधान के तहत बनाये गये भारतीय निर्वाचन आयोग द्वारा किया जाता है। यह एक अच्छी तरह स्थापित परंपरा है कि एक बार चुनाव प्रक्रिया शुरू होने के बाद कोई भी अदालत चुनाव आयोग द्वारा परिणाम घोषित किये जाने तक किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। चुनावों के दौरान, चुनाव आयोग को बड़ी मात्रा में अधिकार सौंप दिए जाते हैं और जरुरत पड़ने पर यह सिविल कोर्ट के रूप में भी कार्य कर सकता है।

चुनावी प्रक्रिया

भारत की चुनावी प्रक्रिया में राज्य विधानसभा चुनावों के लिए कम से कम एक महीने का समय लगता है जबकि आम चुनावों के लिए यह अवधि और अधिक बढ़ जाती है। मतदाता सूची का प्रकाशन एक महत्वपूर्ण चुनाव पूर्व प्रक्रिया है और यह भारत में चुनाव के संचालन के लिए बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारतीय संविधान के अनुसार कोई भी व्यक्ति जो भारत का नागरिक है और जिसकी उम्र 18 वर्ष से अधिक है, वह मतदाता सूची में एक मतदाता के रूप में शामिल होने के योग्य है यह योग्य मतदाता की जिम्मेदारी है कि वे मतदाता सूची में अपना नाम शामिल कराएं। आमतौर पर, उम्मीदवारों के नामांकन की अंतिम तिथि से एक सप्ताह पहले तक मतदाता पंजीकरण के लिए अनुमति दी गई है।

चुनाव के पहले

चुनाव से पहले नामांकन, मतदान और गिनती की तिथियों की घोषणा की जाती है। चुनावों की तिथि की घोषणा के दिन से आदर्श आचार संहिता लागू हो जाती है।

किसी भी पार्टी को चुनाव प्रचार के लिए सरकारी संसाधनों को उपयोग करने की अनुमति नहीं होती है। आचार संहिता के नियमों के अनुसार मतदान के दिन से 48 घंटे पहले चुनाव प्रचार बंद कर दिया जाना चाहिए। भारतीय राज्यों के लिए चुनाव से पहले की गतिविधियां अत्यंत आवश्यक होती हैं। आचार संहिता के अनुसार चुनाव प्रचार के लिए प्रत्याशी 10 चौपहिया वाहन ही रख सकता है, जबकि मतदान वाले दिन तीन चौपहिया वाहनों की अनुमति है।

मतदान का दिन

मतदान के दिन से एक दिन पहले चुनाव प्रचार समाप्त हो जाता है। सरकारी स्कूलों और कॉलेजों को मतदान केंद्रों के रूप में चुना जाता है। मतदान कराने की जिम्मेदारी प्रत्येक जिले के जिलाधिकारी की होती है। बहुत से सरकारी कर्मचारियों को

मतदान केंद्रों में लगाया जाता है। चुनाव में धोखाधड़ी रोकने के लिए मतदान पेटियों के बजाय इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीनों (ईवीएम) का प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाता है, जो भारत के कुछ भागों में अधिक प्रचलित है। मैसूर पेंट्स और वार्निश लिमिटेड द्वारा तैयार एक अमिट स्याही का प्रयोग आमतौर पर मतदान के संकेत के रूप में मतदाता के बाईं तर्जनी अंगुली पर निशान लगाने के लिए किया जाता है। इस कार्यप्रणाली का उपयोग 1962 के आम चुनाव के बाद से फर्जी मतदान रोकने के लिए किया जा रहा है।

चुनाव के बाद

चुनाव के दिन के बाद, ईवीएम को भारी सुरक्षा के बीच एक मजबूत कमरे में जमा किया जाता है। चुनाव के विभिन्न चरण पूरे होने के बाद, मतों की गिनती का दिन निर्धारित किया जाता है। आमतौर पर वोट की गिनती में कुछ घंटों के भीतर विजेता का पता चल जाता है। सबसे अधिक वोट प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को निर्वाचन क्षेत्र का विजेता घोषित किया जाता है।

सबसे अधिक सीटें प्राप्त करने वाले पार्टी या गठबंधन को राष्ट्रपति द्वारा नई सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया जाता है। किसी भी पार्टी या गठबंधन को सदन में वोटों का साधारण बहुमत (न्यूनतम 50 प्रतिशत) प्राप्त करके विश्वास मत के दौरान सदन (लोक सभा) में अपना बहुमत साबित करना आवश्यक होता है।

मतदाता पंजीकरण

भारत के कुछ शहरों में, ऑनलाइन मतदाता पंजीकरण फार्म प्राप्त किए जा सकते हैं और निकटतम चुनावी कार्यालय में जमा किए जा सकते हैं। (https://electoralsearch.in) जैसी कुछ सामाजिक रूप से प्रासंगिक वेबसाइटें, मतदाता पंजीकरण की जानकारी प्राप्त करने के लिए अच्छा स्थान हैं।

दूरस्थ मतदान

अब तक, भारत में दूरस्थ मतदान प्रणाली नहीं है। जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (आरपीए) -1950 के अनुच्छेद 19 के तहत एक व्यक्ति को अपने मत का पंजीकरण कराने का अधिकार है यदि उसकी उम्र 18 साल से अधिक है और वह निर्वाचन क्षेत्र में रहने वाला' आम नागरिक' है, अर्थात छह महीने या उससे अधिक समय से मौजूदा पते पर रह रहा है। (5) उक्त अधिनियम की धारा 20 किसी अप्रवासी भारतीय (एनआरआई) को मतदाता सूची में अपना नाम दर्ज कराने के लिए अयोग्य ठहराती है। इसलिए, संसद और राज्य विधानसभा के चुनाव में एनआरआई को वोट डालने की अनुमति नहीं दी गई है।

अगस्त 2010 में, जन प्रतिनिधित्व बिल (संशोधित)-2010 को लोक सभा में 24 नवम्बर 2010 की बाद की राजपत्र अधिसूचनाओं के साथ पारित कर दिया गया, इस बिल में एनआरआई को वोट डालने का अधिकार दिया गया है। (6) इसके साथ ही अब एनआरआई भारतीय चुनावों में वोट करने के योग्य हो जाएंगे, लेकिन उनके लिए मतदान के समय शारीरिक रूप से उपस्थित होना आवश्यक है। बहुत से सामाजिक संगठनों ने सरकार से आग्रह किया था कि दूरस्थ मतदान प्रणाली के द्वारा एनआरआई और दूर स्थित लोगों द्वारा मतदान करने के लिए आरपीए में संशोधन करना चाहिए। (7) (8) पीपल फॉर लोक सत्ता, सक्रियता से इस बात पर बल देती रही है कि इंटरनेट और डाकपत्र मतदान का एनआरआई मतदान के एक व्यवहार्य साधन के रूप में प्रयोग किया जाए।

पाठकों से अपील

'वॉयस ऑफ बुद्धा' के सभी पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अभी तक वार्षिक शुल्क जमा नहीं किया है, वे शीघ्र ही बैंक ड्रॉफ्ट द्वारा 'जस्टिस पब्लिकेशंस' के नाम से टी-22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001 को भेजें। शुल्क 'जस्टिस पब्लिकेशंस' के खाता संख्या 0636000102165381 जो पंजाब नेशनल बैंक की जनपथ ब्रांच में है, सीधे जमा किया जा सकता है। जमा कराने के तुरंत बाद इसकी सूचना ईमेल, दूरभाष या पत्र द्वारा दें। कृपया 'वॉयस ऑफ बुद्धा' के नाम ड्राफ्ट या पैसा न भेजें और मनीआर्डर द्वारा भी शुल्क न भेजें। जिन लोगों के पास 'वॉयस ऑफ बुद्धा' नहीं पहुंच रहा है, वे सदस्यता संख्या सहित लिखें और संबंधित डाकघर से भी सम्पर्क करें। आर्थिक स्थिति दयनीय है, अतः इस आंदोलन को सहयोग देने के लिए खुलकर दान या चंदा दें।

सहयोग राशिः

पांच वर्ष : 600 रुपए

एक वर्ष : 150 रुपए

The flawed unit of academic quotas

Much more needs to be done to improve faculty diversity on university campuses

In the history of reservations in India, Parliament has sometimes had to resort to even constitutional amendments to overturn some court rulings that have the effect of protecting the interests of 'general candidates'. The 77th constitutional amendment of 1995, which was recently extended to Kashmir, restored reservation in promotions as a nine-judge bench of the Supreme Court in Indra Sawhney (1992) while upholding Other Backward Classes reservation based on Mandal Commission recommendations had prohibited Scheduled Caste/Scheduled Tribe (SC/ST) reservation in promotions.

Ordinance and after

The 81st constitutional amendment was made to overturn the Supreme Court's decision against the 'carrying forward' rule, which permitted the filling of unfilled reserved seats in subsequent years. Similarly, the 85th constitutional amendment was passed in 2001 to restore consequential seniority to promotee SC/ST employees as a 'catch-up' rule introduced by the court in Ajit Singh (1999) was causing hardship to SC/ST employees. Last week, the Narendra Modi government promulgated an ordinance to undo the Allahabad High Court's judgment in Vivekanand Tiwari (2017) which had relied on a number of other High Courts and a few apex court judgments such as Suresh Chandra Verma (1990), Dina Nath Shukla (1997) and K. Govindappa (2009) that had made 'department' rather than 'university' as the unit of reservation in universities.

In Vivekanand Tiwari, an advertisement of the Banaras Hindu University (BHU) for teaching positions was challenged. The BHU, like other Central universities, was following the University Grants Commission policy of treating 'university' as the unit for the purposes of reservation. Due to judicial discipline, Justice Vikram Nath, who authored the judgment, did not have much of choice. But then Justice Nath himself did not seem to be a votary of reservations. In the beginning, he has said, "It is not a mandate but liberty given to the state. It is an enabling provision." Thus, according to him, the government may not provide for reservation.

The importance of 'shall'

Technically speaking, he is right. But then we cannot ignore that Article 335 categorically says that "claims" of SC/STs to posts in Centre and the States 'shall' be taken into consideration. As opposed to 'may' or 'will', the use of the word 'shall', in law, means mandatory. While the judgment ended at page 29, Justice Nath devoted several additional pages to make out a case for the re-examination of the reservation policy by the government though there were no pleadings on this issue. He asked it to examine whether reservation at all is needed in university teaching posts.

Our courts have used the differences between 'cadre', 'service' and 'post' to arrive at the conclusion that 'department' should be unit of reservation. So though lecturers, readers and professors in a university have the same scale and allowances in their respective cadres, they cannot be clubbed together. Since there is no scope for interchangeability of posts in different disciplines, each single post in a particular discipline is be counted as a separate post. On the face of it this seems to be perfectly logical. But the reality of the working of our universities is different. Every university spends lot of time in deciding reservation and tries to balance the completive interests and needs of various departments.

Even with the 'university' as the unit, in over 40 Central universities we have huge under-representation of SCs and STs especially at the level of professor and associate professor. If 'department' was allowed to be taken as a unit, these numbers would have been far less.

In its review petition, the government did share with the Supreme Court the BHU's example of the adverse effect of using 'department' as the unit. For example, there were 1,930 faculty posts on May 12, 2017. If the BHU were to implement reservation based on using 'university' as the unit of reservation, 289 posts would have had to be reserved for SCs, 143 for STs and 310 for OBCs. Under the new formula of using 'department' as the unit, the number of reserved positions would go down to 119 for SCs, 29 for STs and 220 for OBCs.

Beginning of an end

Implementation of the department-wise reservation policy would have had a disastrous effect on other universities as well.

A study of 20 Central universities by the Central government has shown that reserved posts will come down from 2,662 to 1,241 in a year. The number of posts of professor would have reduced from 134 to just 4 for SCs; from 59 to zero for STs, and from 11 to zero for OBCs. But number of unreserved or general posts would have drastically increased, from 732 to 932. At the level of associate professor, for SCs it will have reduced from 264 to 48, for STs from 131 to 6, and for OBCS from 29 to 14. But here again the number of general posts would have increased from 732 to 932. In the case of assistant professor, the number of reserved posts would have reduced from 650 to 275 in STs, from 323 to 72 for SCs, and from 1,167 to 876 for OBCs. But the number of unreserved or general posts would have gone up from 2,316 to 3,233. Thus department-wise reservation was a sophisticated beginning of an end of reservation. If SC/ST candidates do not become professors, they cannot become vice-chancellors as only a professor with 10-year experience is eligible for this. In 2018, out of some 496 vice-chancellors of Central and State universities, there were just six SC, six ST and 48 OBC vice-chancellors.

The government deserves appreciation for the ordinance, though brought in belatedly on the eve of the elections to garner Dalit votes. But we need to do more to improve diversity on our campuses with more SCs, STs, OBCs, Muslims, persons with disabilities and sexual minorities being recruited as faculty as our campuses do not reflect social diversity despite the university being a unit for reservation. Let the score on the diversity index be a major criterion in giving grants to universities.

Faizan Mustafa is Vice-Chancellor, NALSAR University of Law, Hyderabad. The views expressed are personal

International Women's Day: Freedom Awards by Buddha Education Foundation

New Delhi, 10 March, 2019 North-West Delhi MP Dr Udit Raj and Buddha Education Foundation celebrated International Women's Day with about 2000 female representatives at a large conference at Royal Paper Banquet Hall, Peeragiri, New Delhi. Decades have passed, and the participation of, respect for and economic dependence of women are still major issues. The subject of Freedom of Women - A Dream, was the main subject of the conference.

Freedom Awards on occasion of INTERNATIONAL WOMEN DAY by Dr. Udit Raj, chairman, Buddha Education Foundation

Despite education, women are not able to contribute to various sectors such as economic, political, education, health etc. because of lack of independence. On this occasion, women with outstanding contribution, who have contributed in different fields were honored and given "Freedom Award".

The problems of Indian society are different from the US and Europe or other countries. In our society, rituals form a major hindrance in the

From revolutions to roses

Women's Day should be an occasion to ponder over how much more is to be done for gender justice

On Women's Day this year, messages clogged my inbox. They offered tempting discounts in salons, on shoes, clothes and cosmetics, and even complimentary cocktails. Despite women organising seminars on finance, sexual harassment and health problems across the country, tokenistic marketing threatened to reduce the day to hashtags and discounts.

The irony and history

On the International Women's Day 2019 website, the partners included McDonald's, Amazon and Oracle. McDonald's is facing flak in the U.S. for failing to pay its largely female workforce the minimum wage, Amazon is reported to have a huge gender diversity problem, and Oracle is facing a civil rights suit that alleges female employees were paid on average $13,000 less per year than men doing similar work. All three were apparently in support of the 2019 campaign theme, 'Better the balance, better the world'. The irony of all this is particularly rich given that International Women's Day has its origins in socialism. German socialist and feminist Clara Zetkin, who organised the first International Women's Day, was a socialist first and a feminist next. In the magazine Die Gleichheit (Equality), Zetkin wrote in 1894: "Bourgeois feminism and the movement of proletarian women are two fundamentally different social movements." Zetkin held that "bourgeois feminists" were not concerned with the conditions of working class women who were fighting not only against men who sought to suppress them, but also with men against a common oppressor, capitalism. She believed that as white, upper class feminists would only fight to better their own conditions, socialism was the only way to serve the needs of working class women.

ALSO READ

Stop celebrating Women's Day

Zetkin suggested in the Second International Conference of Socialist Women at Copenhagen in 1910 that Women's Day be celebrated each year, the foremost purpose of which would be "to aid the attainment of women's suffrage". The timing for the proposal was ideal — a year earlier, the Socialist Party in the U.S. had also suggested that a National Women's Day be observed, in honour of a strike that took place in 1908. More than 15,000 women garment workers fought for higher wages and shorter working hours in that strike.

Following Zetkin's proposal, International Women's Day was observed in a few European countries on March 19, commemorating the 1848 Revolution in Prussia when a people's uprising had forced the king to promise women the right to vote, which he later failed to keep. But the day became truly revolutionary only later. In Russia, protests erupted on March 8, 1917, against World War I and brought down the Tsarist Empire. The new government gave the women the right to vote. International Women's Day was thus a day of resistance and demand. The reason the UN observed the day only decades later, from 1975 onwards, was because the Americans were aware of — and wary of — its origins in socialism. Over the decades, women's demands have varied across cultures. In India, for instance, following the anti-colonial and social reform movement, the Constitution guaranteed justice, dignity and equality for women. However, these values came in conflict with old patriarchal values, thus limiting women's progress. The women's movement became fragmented, only to see a resurgence in the 1970s after the Emergency when there was a rallying cry for civil rights. This led to the birth of several women's organisations, which successfully pushed for legal reforms. The women's movement slowly regained strength, fighting against dowry deaths, domestic violence, and sexual abuse. However, it never really appreciated the struggles of Dalit and Bahujan women.

Issues in India

On this March 8, in some parts of the world (mostly Latin America and Europe), women continued to do what women in the early '90s did — protest. In India, however, several companies with gender diversity and pay gap problems celebrated the day, despite the alarming trend of more and more women withdrawing from the workforce (female participation in the workforce fell from 42.7% in 2004-05 to 23.3% in 2017-18). WhatsApp forwards continued to celebrate women as mothers, daughters and sisters who are able to multi-task effortlessly, underlining the widespread belief that it is acceptable for women to work as long as they also carry out their traditional duties at home. Given the huge inequality in the treatment and payment of women workers, and with labour conditions being unfriendly to women, it is important to ask what really women want on this day: roses or reforms? Instead of celebrating women, companies would do well to reflect on how they treat their women: is their pay on a par with men? Are sexual harassment cells in place and do they function? Are there crèches at workplaces? And what about the informal sector, the working class women, who are not represented by "bourgeois feminists"? How do we consolidate various women's movements across classes and castes?

In an increasingly unequal world, March 8 gives us the opportunity to ask ourselves how much more is to be done and how it is to be accomplished. Instead of allowing a day rooted in protest to be taken over by consumerism, women could mobilise around specific issues — better sanitation facilities and better wages — and make sustained demands for effective change in their conditions.

International Women's Day: Freedom Awards.....

independence of women more than economic domination. Because of mental abuse, even educated and competent women are not able to live upto their potential because of the absence of independence. As the trend shows, in 10th and 12th grades of CBSE, girls are doing better than boys and this example is enough to understand that when there is no barrier between male and female, women can succeed no less than men. Security forms no barrier at schools or at home, but when it comes to exposure of the external world, conservative thinking at workplaces and bonds of customs stand up, and hence women tend to fall behind.

In an endeavour of women empowerment, Buddha Education Foundation has trained about 11,000 women in the North-West Lok Sabha constituency. In addition, job work is provided at home so that women can be financially independent. Presently a campaign of full health checkups for 10,000 people is being run. Khampur and Jhimarpur, where the toilet at home were not available, the facilities were provided under the Swachh Bharat Campaign of Government of India. Schools have also been provided with the facilities of clean drinking water, projectors, computers, etc. Stitching-embroidery centres are also underway.

At the occasion, Dr. Udit Raj, Chairman of Buddha Education Foundation said that "India cannot be in the category of developed countries unless the participation of women is increased. In India, there is a total 17% contribution of women in gross domestic product which is very low. As far as the Labor Force Participation Rate is concerned, it is also very disappointing. It was 35% in 2004 which further reduced to 25% and therefore there is a worrisome situation in every sector."

In the preparation of this huge conference, Mr. Gaurav Grover, Mrs. Rachna Sharma, Mrs. Supreet Raj made major contributions and supported the cause. We also thank those who have given gifts to increase the morale of the Freedom Awardees, such as Mrs. Jasmeet Kaur from KBI Fashion House, Mr, Nakul Gandhi from Velvet Bags, Mrs Bharti Taneja, and others.

Appeal to the Readers

You will be happy to know that the Voice of Buddha will now be published both in Hindi and English so that readers who cannot read in Hindi can make use of the English edition. I appeal to the readers to send their contribution through Bank draft in favour of 'Justice Publications' at T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001. The contribution amount can also be transferred in 'Justice Publications' Punjab National Bank account no. 0636000102165381 branch Janpath, New Delhi, under intimation to us by email or telephone or by letter. Sometimes, it might happen that you don't receive the Voice of Buddha. In that case kindly write to us and also check up with the post office. As we are facing financial crisis to run it, you all are requested to send the contribution regularly.

Contribution:

Five years	**:**	**Rs. 600/-**
One year	**:**	**Rs. 150/-**

VOICE OF BUDDHA

Publisher : Dr. UDIT RAJ (RAM RAJ), Chairman - Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42

● Year : 22 ● Issue 6 ● Fortnightly ● Bi-lingual ● Total Pages 8 ● 1 to 15 March, 2019

Decisions of Supreme Court, But Balme is on the Government

On 20th March 2018, Supreme Court made so many amendments in the SC/ST Prevention of Atrocities Act that the regulation is now powerless. It is to be noted that the Act is special category regulation which was enacted by the Parliament and it shall be amended only by the Parliamentarians, not by the Judiciary. Professor of Banaras Hindu University filed case in Allahabad High Court against recruitment of SC/ST & OBC category in University, for which judiciary has set new policy. Unfortunately Supreme Court also accepted the High Court's stand as a result on 5th March,2018 University Grant commission promulgated an instrument (प्रपत्र जारी) order clarifying that recruitment in Universities will be done at the department level instead of University level. Both these decisions were unconstitutional, castist and discriminatory. Due to this huge resentment has spread among the Dalits and Tribals all over the country and on 2nd April 2018, call for Bharat Band was invoked. By this protest a situation of casteist conflict rose and the blame was put on the Government for the same.

In the matter of Vivekanand Tiwari, Allahabad High Court has clarified that Department should be termed as a unit instead of the whole University. This matter came up when an advertisement for recruitment of teachers by the Banaras Hindu University was challenged by the Vivekanand Tiwari in Allahabad High Court. Judge Vikram Nath ordered that for implementation of reservation, a department should be considered as a unit which is in line with the constitutional provision under adequate clause. However, Hon'ble Judge omitted the fact that under the clause 335 fulfilling the quota of Scheduled Caste and Schedule Tribes is mandatory. By this judgment the policy of the government got amended, which cannot be done by the High Court. The recruitment policy has no such provision that for fulfilling the quota in one department, more seats can be the filled from reserved category in the other department. In this regard Government has presented its opinion in Supreme Court that implementation of this judgment may adversely impact the reservation.

Till 12th May 2017 there were 1930 teachers in Banaras Hindu University. If the University is considered as the unit then strength of teachers from reserved category must be 289 and if a department is considered as a unit then this figure comes down to 119. Number of Schedule Caste & Tribes downsizes from 143 to only 29 and OBCs downsizes from 310

to only 220. When Government of India studied details of 20 Central Universities, it found that in place of 2662 posts only 1241 will be left over for reserved candidates. For scheduled caste professors only 4 post will be left, out of 134 post. For scheduled tribe professors zero post will be left out of the present 59 post and for OBC also zero post will be left out of the present 11 post. However for General category posts will be raised from 732 to 932.

In the category of Assistant Professor, the posts for scheduled caste's will reduce from 264 to only 48, for scheduled tribe's from 131 to only 6 and for OBC's from 29 to 14. Similarly it will impact the post of Assistant Professor and Professors.

The chances of becoming Vice-Chancellor or similar equivalent eminent post will not be possible for the person from reserved category if the person from scheduled caste / tribes and OBC will not get the opportunity to be a professor. In 2018 out of 496 Central and state Universities only 6 scheduled Caste, 6 Scheduled Tribe and 48 OBC candidates could make it. The government's initiative in this regard is commendable that it brought ordinance and saved this situation.

This is not enough and more initiatives are needed so that Dalit, Backward and Minorities get more participation. Harvard University has tremendous reputation but at the same time we should be informed that students and teachers from all community, caste and creed get representation. This policy of the American Government is called "Affirmative Action" and in India we call it as "reservation". It is mandatory in India whereas it is in form of guidelines for adoption in America.

Unfortunately judiciary has started formulating more law than parliament where as the function of the judiciary is to implement the law where ever it is not implemented effectively. Whenever the laws are enacted in the Parliament and by the Parliamentarians, it addresses the people's will and wisdom, whereas when it is done by the judges, their personal opinions supersede everything, resulting in conflicts among the society and the government has to bear the consequences. In both these matter people tried pressurize the government whereas there was no role of the government in this at all. When this judgment was passed, huge protest effected throughout the country and casteist conflict started. The Constitution has clearly defined the roles and responsibilities of the Legislature, Judiciary and Administration. It is observed that Judiciary is continuously intruding into the arena of Administration and Legislature due to which all the government functioning is impacted. Justice is becoming costly and people are afraid in doing the correct work as well. Judiciary is taking the advantage of this conflict between the political people and people are unaware of the things happening inside the Judiciary. Common man is not in a position to get justice from High courts or Supreme Court as the lawyer's fees is in Lakhs. Judges have created advocates with face value who generally earn a crore in a single day.

The function of the Judiciary is to do justice and not injustice. I have raised the issue Parliament that Judiciary is against the Poor, Dalits and Backwards. Like in other countries, in our country also we need to come out to roads and protest against the judiciary otherwise different type of conflict and bitterness among the people in society will rise and without fault the government will be put at the dock.

✦✦✦

Publisher, Printer and Editor - Dr. UDIT RAJ (FORMERLY KNOWN AS RAM RAJ), on behalf of Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42, Telefax:23354843, Printed at Sanjay Printing Works, WZ-4A, Basai Road, New Delhi.
Website : www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com Computer typesetting by Ganesh Yerekar